ISSN No 2347-7075
Impact Factor- 7.328
Volume-2 Issue-7

INTERNATIONAL JOURNAL of ADVANCE and APPLIED RESEARCH

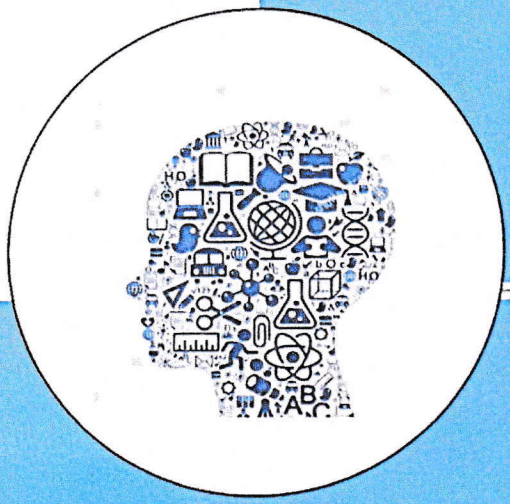

Publisher: P. R. Talekar
Secretary,
Young Researcher Association
Kolhapur(M.S), India

Young Researcher Association

IJAAR Vol.2 Issue-7 ISSN – 2347-7075

24	हिन्दी उपन्यासों में किसान विमर्श : स्वरूप विवेचन ('गोदान', 'ग्लोबल गाँव के देवता' और 'फाँस' के विशेष संदर्भ में)	मिर्जा मासूम फातिमा	63-65
25	शशिप्रभा शास्त्री के उपन्यासों में नारी विमर्श	मोल्लप्पा डोलमा	66-67
26	'भावना के पीछे' नाटक में चित्रित नारी	प्रा. साठे सीता पोपट	68-69
27	'कुइयाँजान' उपन्यास में महानगरीय विमर्श	प्रा. डॉ. नेहा अनिल देसाई	70-71
28	दलित चेतना की बेबाक अभिव्यक्ति (सूरजपाल चौहान का कविता संग्रह 'क्यों विश्वास करूँ' के विशेष संदर्भ में)	डॉ. भूपेंद्र सर्जेराव निकाळजे	72-74
29	'फाँस' उपन्यास में चित्रित कृषक जीवन	डॉ.परमेश्वर जिजाराव काकडे	75-77
30	जागतिकीकरण और सबसे कठिन काम कहानी	प्रा. डॉ. पवन नागनाथ एमेकर	78-79
31	'अकाल में उत्सव' उपन्यास में किसान जीवन की व्यथा	प्राजक्ता शिवाजी कुरळे	80-81
32	दलित अस्मिता और हमारे हिस्से का सूरज	डॉ.प्रकाश आठवले	82-85
33	उत्तरशती के हिंदी उपन्यासो में नारी समस्या	डॉ. प्रकाश राजाराम मुंज	86-89
34	दलित चेतना का दस्तावेज : छप्पर	प्रा. डॉ. आर. बी. भुयेकर	90-92
35	भूमंडलीकरण और हिंदी कविता	लैफ्ट. डॉ. रविंद्र पाटील	93-95
36	हिंदी साहित्य मे आदिवासी साहित्य की विकास धारा: एक परिपेक्ष्य के रूप में	डॉ. आर. पी. भोसले	96-98
37	सुनील अवचार याच्या कवितेतील ग्लोबल वर्तमान	डॉ सुनिता रामचंद्र कांबळे	99-100
38	चंद्रकांता के 'अंतिम साक्ष' उपन्यास में नारी विमर्श	रविंद्रनाथ माधव पाटील	101-103
39	कुर्सी पहियोंवाली' में उद्धृत नारी आत्मनिर्भरता	कु . प्राजक्ता अंकुश रेणुसे	104-106
40	समकालीन हिंदी उपन्यासों में स्त्री- विमर्श	सौ. रेशमा गणेश लोंढे	107-108
41	आँचलिक उपन्यासों में नारी विमर्श	प्रा. रोहिणी गुरुलिंग खंदारे	109-110
42	नारी की व्यथा को उजागर करता नाटक 'जी, जैसी आपकी मर्जी....	प्रा.रूकसाना अल्ताफ पठाण	111-112
43	श्री मैथिलीशरण गुप्तजी की कविता 'सैरंध्री' में नारी-विमर्श	सुश्री. रूपाली संभाजी पाटील	113-114
44	'नरककुंड में बास' उपन्यास में दलित विमर्श	प्रा. डॉ. संदीप जोतिराम किर्दत	115-117
45	नीरजा माधव के 'यमदीप' उपन्यास में किन्नर विमर्श	डॉ.संजय पिराजी चिंदगे	118-119
46	समकालीन हिंदी साहित्य में चित्रित किन्नर विमर्श	डॉ. संजय ना. पाटील	120-123
47	भूमंडलीकरण का दलितों पर अधूरा प्रभाव	प्रा.राठोड संजय लिंबाजी	124-126

International Journal of Advance and Applied Research (IJAAR)
Peer Reviewed Bi-Monthly
ISSN - 2347-7075
Impact Factor - 7.328
Vol.2 Issue.7 Mar - Apr 2022

भूमंडलीकरण और हिंदी कविता

लेखक - डॉ. रविंद्र पाटील
राजर्षि छत्रपति शाहू कॉलेज, कोल्हापुरमहाराष्ट्र - ४१६००३
ई-मेल - rcpatilshahu@gmail.com

महत्वपूर्ण बात यह है कि भूमंडलीकरण है क्या? इसका अर्थ क्या है? इसकी शुरुवात कैसे और क्यों हुई? इसके फायदे और नुकसान क्या है? ऐसे अनेक सवाल पाठकों के मन में उठते हैं। अमरिका और सोवियत संघ के बीच चली शीत युध्द की समाप्ति सन १९९१ हुई। इसी समय सोवियत संघ का विघटन हुआ। इसी के परिणाम के चलते अमरिका के नेतृत्व में पूँजीपति विकसित राष्ट्रों की एक मंडली बनी। आगे चलकर इसी पूँजीपति देशों की मंडली ने देखते ही देखते पूरे विश्व की व्यापार पर अपना दबदबा कायम की। इसी के चलते अनेक समझौते होने लगे। परिणामत: पूरा विश्व एक बाजार बन गया। यहीं से भूमंडलीकरण (वैश्वीकरण) की शुरुवात हुई। वैश्वीकरण के संदर्भ में श्री. डॉ. रमेश वर्मा लिखते है, "पूरी दुनिया को बाजार बना देने की प्रक्रिया या चाहत ही वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण कहलाती है। इस सिद्धांत के मतानुसार भूमंडल पर निवास करनेवाला मनुष्य या तो पण्य है, होगा या पण्यभोगी है। भूमंडलीय या वैश्वीकृत व्यवस्था की पहली अपेक्षा यह है कि किसी भी देश की भौगोलिक और राजनीतिक सीमाएँ वस्तुओं तथा पूँजी के मुक्त आवागमन में बाधक न बनें। व्यापार विश्वस्तर पर निर्बंध ढंग से चल सके।"[1] भूमंडलीकरण के केंद्र में आर्थिक वर्चस्व, सांस्कृतिक वर्चस्व और मीडिया वर्चस्व ये तीन महत्वपूर्ण बिंदू है। वर्तमान समय में यह विश्व की प्रमुख व्यवस्था बन चुकी है। इस व्यवस्था का संचालन अमेरिका और कुछ पश्चिम के देश कर रहे है।

बीसवी सदी के अंतिम दशक में भारत में भूमंडलीकरण, उदारीकरण, नवनिवेशीकरण आदि का उदय हुआ। भारत ने भी अपना दरवाजा मुक्त बाजार के लिए खोल दिया। परिणामत: पूरा देश 'ग्लोबल विलेज' बन गया। गावों से लेकर महानगरों तक बदलाव दिखाई देने लगा। संयुक्त परिवार की जगह एकल परिवारों की संख्या बढने लगी। परिवार का विघटन अधिक मात्रा में होने लगा। हर कोई बाजार पर निर्भर होने लगा। इन सभी घटनाओं से साहित्य भी अछुता नही रहा। भूमंडलीकरण के दौर में मनुष्य ने एक ओर भौतिक सुखों को प्राप्त किए वहीं दुसरी ओर प्राकृतिक सुख सुविधाओं को खो दिए। इसका सीधा प्रभाव इक्कीसवी सदी के साहित्य एवं साहित्यकारों पर भी हुआ। अनेक साहित्यकारों ने विविध विधाओं के माध्यम से भूमंडलीकरण के वास्तविकता पर प्रकाश डाला है। इनमें खासकर महानगरीय विमर्श, किसान विमर्श, आदिवशी विमर्श, दलित विमर्श, किन्नर विमर्श आदि विमर्शों के माध्यम से गतिशील यथार्थ पर प्रकाश डाला है। असंतोष एवं आक्रमकता इसके स्वर है।

सन १९९० के बाद हमारा देश कुछ क्षेत्रों में जमीन से उठकर शिखर की चोटी पर पहुँच गया वहीं दूसरी ओर सांस्कृतिक धरोहर में चोटी से जमीन पर आ गिरा। वर्तमान समय में 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की जगह अमरिका और पाश्चात्य देशों की देन भूमंडलीकरण ने लिया। स्वदेशी चीजों पर विदेशी ने अपना अधिकार स्थापित कर नया ब्रँड बना लिया। इसके संदर्भ में कवि बोधिसत्व लिखते हैं,

"धीरे धीरे उठान हुआ
लाल भात का।
पहले थाली से फिर रसोई से
अहदन से फिर कोठिला से जहाँ रखे जाते थे।
फिर खेत से।
उस न महकनेवाले काले से चावल की,
उस खूरदूरे अन्न की जगह
आए धीरे-धीरे महकनेवाले
सफेद भूरभूर चावल।"[2]

प्रस्तुत काव्य पंक्तियों के माध्यम से कवि यह स्पष्ट करना चाहते है कि भूमंडलीकरण का सीधा प्रभाव अपने खानपान पर हुआ है। थाली में परोसी हुई देशी चावल की जगह विदेशी सुगंधी चावल ने ली है। जिस प्रकार देशी खानपान की संस्कृति पर भूमंडलीकरण का प्रभाव हुआ है ठिक उसी प्रकार का प्रभाव देशी पशुओं पर भी हुआ है। देशी गायों की नस्ल खत्म होती जा रही है। वहीं दुसरी ओर विदेशी की पुजा हो रही है। देशी नस्ल की कुत्ते धीरे-धीरे कम हो रहे हैं और विदेशी नस्ले बढ रही है। इसके संदर्भ में कवि लिखते हैं,

"जैसे उच्छिन्न हुआ लाल भात
वैसे ही कहाँ खों गए छोटे-छोटे देशी बैल खो गए कहीं
कम दूध देनेवाली उनकी माँयें
खराब नस्लवाली कपिला, कृष्णा गाया।
यों...तो यह सब धीरे-धीरे हुआ .....पर हुआ।
देशी भैंस देशी कुत्ते.....देशी अन्न देशी गाय।
सबको कम गुणी कहकर खत्म किया गया।"[3]

आज का समय बाजार का समय है। आज बाजार में जो सबकुछ उपलब्ध है जिसे उपभोक्ता चाहता है। 'मॉल' संस्कृति ने बाजार के स्वरूप ही बदल दिया है। ग्राहक जो चाहता है वो सब एक ही जगह पर उपलब्ध है। एकांत श्रीवास्तव की 'बाजार' कविता की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है,

"यहाँ थोडे से लोग विक्रेता है बाकी सब क्रेता
बाकी सब में बहुत से लोग क्रेता भी नहीं है
जो क्रेता नहीं है यानी जिनकी जेबें खाली है
वे बाजार के वृत्त से बाहर है
चढ गई है किमते चीजो के आकाश मे
गिर गया है आदमी का बाजारभाव।"[4]

भूमंडलीकरण के कारण सबसे बडा रुपयावाली बात सच साबित हो रही है। जिसके पास पूँजी है उसके पास सबकुछ है। जिसकी जेब खाली है वह भिखारी है। जलजीरे और नींबू पानी की जगह कोका-कोला और पेप्सी जैसी कंपनियों ने ली है। पॉकेट बंद खाने की संस्कृति तेजी से बढ रही है।

इक्कीसवी सदी के कवियों ने वास्तविकता को अधिक महत्व दिया है। अनेक कवियों ने स्री के संघर्ष का चित्रण किया है। उसकी पीडा को वाणी दी है। निर्मला पुतुल की 'उतनी दूर मत ब्याहना' चर्चित कविता है। प्रस्तुत कविता में कवियत्री अपने बापू से कहती है कि मेरी शादी बहुत दूरवाले रिश्तेदारों के यहाँ मत करना, जहाँ मुझसे मिलने आने के लिए तुम्हें अपनी बकरियाँ बेंचनी पडें।

"मुझे उतनी दूर मत ब्याहना
जहाँ मुझसे मिलने जाने खातिर
घर की बकरिया बेचनी पडे तुम्हें
मत ब्याहना ऊस देश में
जहाँ आदमी से ज्यादा ईश्वर बसते हैं"।[5]

भूमंडलीकरण के इस दौर ने कवियों को अनेक विषयों पर लिखने के लिए मजबुर किया है। सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, धार्मिक, सास्कृतिक आदि विविध पहलुओं का समावेश इसके अंतर्गत है। वैश्वीकरण के समय की आर्थिक विषमताएँ कवि मन को लिखने के लिए मजबूर कर देती है। कवि भूमंडलीकरण की वास्तविकता को उद्घाटित करते हुए लिखते हैं,

"और मैं सोचने लगा
कि दो रुपये का आलू
कैसे हो जाता है एक सौ साठ का अंकल चिप्स?
क्या वहीं से आया है डंकल
जहाँ से आये थे अंकल जी।"[6]

भूमंडलीकरण दे दौर में वैश्वीक बाजार एक क्रूर किस्म की पूँजीपति व्यवस्था को जन्म दे रहा है। पूँजीपति व्यवस्था से ही उपभोगतावादी गलत संस्कृति की जन्म हुई है। इस उपभोगतावादी संस्कृति ने रचनाकारों के दिल को झकझोर दिया है। इस व्यवस्था ने व्यक्तिवाद को बढ़ावा दिया है। भूमंडलीकरण ने पूरी दुनिया को 'ग्लोबल विलेज' बना दिया है। इस पूरी व्यवस्था का कप्तान अमरिका है। यह एक नया आर्थिक साम्राज्यवाद है। बहुराष्ट्रीय कपनियों के माध्यम से पूरी दूनिया को अपनी मुठ्ठी में किया है। परिणाम के चलते अमरिका का डॉलर सबका बाप बन गया है। कवि देवी प्रसाद मिश्र जी की काव्य पंक्तियाँ दृष्टव्य है,

"देश में एक और बहुराष्ट्रीय कंपनी के आने की
घोषणा होती है और एक आदमी
जिसके पास अब भी आदमी होने की स्मृति बची
होती है, सोचता है
वह अपनी राष्ट्रीयता किस कुँए में फैंक दे।"[7]

भूमंडलीकरण के प्रभाव के चलते आज हरचीज बाजार में बेची जानेवाली वस्तु बन गयी है। मनुष्य चक्का-चौंध बाजार में कटपुतली बन गया है। बाजार ने मानव शरीर के साथ-साथ पानी, शिक्षा व्यवस्था, स्वास्थ आदि को भी नहीं बक्शा है। कवि इन बातों का विरोध करते है,

"वे बनाऐंगे सामान
हम नहीं खरीदेंगे
वे तय करेंगे सदी का रस्ता
हम नहीं चलेंगे
मोहक विज्ञापनों का असर नहीं होगा हम पर
एक मुट्ठी अन्न रोज खायेंगे
और बचाऐंगे बीज
दुनिया में
विरोध सारे हथियार जब चक्र जाऐंगे
फिर भी बचा रहेगा ह्मारा असहयोग